अनुबोधन, खण्ड 2, अंक 2, अप्रैल–जून 2026, पृष्ठ 168–175
जर्नल वेबसाइटः ISSN: 3049-4184 (प्रिन्ट) 3108-1185 (ऑनलाइन)
https://anubodhan.org https://doi.org/10.65885/anubodhan.v2n2.2026.075

नव्य न्याय परंपरा में नैयायिक श्री भवानंद सिद्धांतवागीश: एक समीक्षात्मक अध्ययन

अमित कुमार मण्डल [1]

प्राप्तिः 27 जून 2026 / स्वीकृतः 29 जून 2026 / प्रकाशित: 30 जून 2026
Copyright © 2026 Author(s). Published by Siri Research Foundation. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution International License (CC BY 4.0).

शोध-सार

नव्यन्याय परंपरा के मूर्धन्य मनीषी महामहोपाध्याय श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश (अनुमानित काल १५२०-१५९५ ई.) के ऐतिहासिक काल-निर्धारण, गुरु-परंपरा तथा उनकी विरल ग्रन्थ-संपदा का एक आलोचनात्मक एवं साक्ष्य-आधारित अनुशीलन प्रस्तुत करता है। नवद्वीप (बंगाल) की बौद्धिक धरा पर अवतरित आचार्य भवानन्द ने रघुनाथ शिरोमणि तथा कृष्णदास सार्वभौम की महान न्याय-परंपरा को आगे बढ़ाया। यद्यपि तत्कालीन प्रादेशिक ईर्ष्या और विद्वेष के कारण बंगाल में उनकी कृतियों को पारंपरिक पाठ्यक्रमों में यथोचित स्थान नहीं मिल सका, परंतु दक्षिण भारत और काशी (वाराणसी) के विद्वत्समाजों में उनकी टीकाओं को अत्यधिक समादर प्राप्त हुआ। प्रस्तुत अध्ययन में आचार्य दिनेशचंद्र भट्टाचार्य, गोपीनाथ कविराज तथा प्रो. इंगल्स द्वारा प्रस्तुत अंतःसाक्ष्यों, पांडुलिपियों के लिपिकाल (जैसे 'कारकचक्र'-१५६४ ई. तथा 'दीधितिटिप्पणी'-१५९३ ई.) और 'राढीय कुलपंजिका' के साक्ष्यों का सम्यक विश्लेषण करते हुए सतीशचंद्र विद्याभूषण के परवर्ती काल-निर्धारण (१६२५ ई.) का तार्किक खंडन किया गया है। इसके अतिरिक्त, भवानन्द द्वारा रचित कुल ४२ ग्रन्थों की सूची में से 'मणिदीधितिप्रकाश', 'प्रत्यक्षदीधिति-टीका', 'अनुमानदीधितिटीका', 'गुणदीधितिटीका' तथा 'लीलावतीशिरोमणिटीका' जैसी दुर्लभ पाण्डुलिपियों की वर्तमान स्थिति, उनके पत्र-संख्यांकन तथा सुदूर पुस्तकालयों (जैसे लंदन स्थित इंडिया-हाउस) में उनकी उपलब्धता पर प्रकाश डाला गया है।

कुंजी-शब्द: नव्य-न्याय, पाण्डुलिपि विमर्श, नवद्वीप परंपरा, काल-निर्धारण, पारंपरिक अध्ययन, पाठ-आलोचना, पुष्पिका, परिभाषा।

भूमिका

भारतवर्ष अनादि काल से ही ज्ञान, दर्शन और आध्यात्मिक गौरव की पावन स्थली रहा है। इस भूमि ने अनेक ऐसे द्रष्टा दार्शनिकों और प्रकांड विद्वानों को जन्म दिया है, जिन्होंने अपनी सूक्ष्म प्रज्ञा से दर्शन जगत को समृद्ध किया। इसी गौरवशाली परंपरा में, विशेषकर १६वीं शताब्दी के बंगाल प्रांत के नवद्वीप क्षेत्र में, नव्य-न्याय परंपरा के एक असाधारण स्तंभ का प्राकट्य हुआ, जिन्हें हम महामहोपाध्याय श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश के नाम से जानते हैं। उनकी शिक्षा में नव्य-न्याय के अकाट्य तर्क, व्याकरण का शब्दार्थ-विचार और मीमांसा के विधि-निषेध विवेक का अनूठा समन्वय देखने को मिलता है।

[1] स्टेट एडेड कॉलेज टीचर, संस्कृत विभाग, श्रीकृष्ण महाविद्यालय, नदीया, पश्चिमवङ्ग, भारतवर्ष
✉ अमित कुमार मण्डल, E-mail: vyakarancharcha@gmail.com

परंतु, भारतीय विद्वानों की सहज विनयशीलता और ऐतिहासिक साक्ष्यों के अभाव के कारण इस महान नैयायिक का जीवनवृत्त और काल-निर्धारण लंबे समय तक इतिहासविदों के लिए एक जटिल पहेली बना रहा। एक समय ऐसा था जब भवानन्द जी के ग्रंथ संपूर्ण भारत में अत्यंत आदर के साथ पढ़े जाते थे, किंतु कालचक्र के प्रभाव से वे अपनी ही जन्मभूमि बंगाल में विस्मृति के गर्त में चले गए। वर्तमान में बंगाल में उनके दो प्रकरण 'कारकचक्रम्' और 'ल-कारार्थ निर्णय' परम आदर के साथ पढ़े जाते हैं। इसी से यह सिद्ध होता है कि सदियाँ बीत जाने के बाद भी उनका पांडित्य और शिक्षण पद्धति आज भी कितनी प्रासंगिक है।

नैयायिक भवानन्दसिद्धान्तवागीश का परिचय

भारतवर्ष अपने आध्यात्मिक गौरव से सुशोभित ज्ञाननिधि स्वरूप देश है। इस भूमि पर असंख्य लब्धप्रतिष्ठ विद्वान, पंडित और क्रांतदर्शी दार्शनिक अवतरित हुए। वे अपने वैचारिक जगत में संचरण करते हुए अत्यंत सूक्ष्म तत्वों का सुंदर विश्लेषण व प्रस्तुतीकरण करते थे, परंतु महानता के बावजूद विनयवश अपने परिचय को गुप्त रखते थे।ऐसे ही मूर्धन्य विद्वानों और नैयायिकों में महामहोपाध्याय की उपाधि से विभूषित श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश अग्रणी हैं। वे नवद्वीप (बंगाल) क्षेत्र के सर्वश्रेष्ठ पंडितों में परिगणित थे। परंपरागत मान्यताओं के अनुसार, वे नवद्वीप के एक प्रतिष्ठित महान नैयायिक कुल में उत्पन्न हुए थे।भवानंदाचार्य राढ़ी श्रेणी के ब्राह्मण थे। अनुमान लगाया जाता है कि नवद्वीप के तेघड़ी के पास नंदीपाड़ा में 'सिद्धांतेर भिटा' नाम से जानी जाने वाली बंजर भूमि ही उनका मूल निवास स्थान थी।उनके पिता का नाम रमापति था। इसके अलावा भवानंद सिद्धांत वागीश के दो पुत्रों के बारे में पता चलता है। जैसे- श्रीकृष्ण तर्कवागीश और श्रीराम तर्कालंकार। भवानंद बागीश के पौत्र रुद्रराम तर्कवागीश थे, जिन्होंने कारकचक्र ग्रंथ की टीका लिखी थी। जनश्रुति के अनुसार कुछ लोग मानते हैं कि श्री भवानंद के गुरु श्री मथुरानाथ तर्कवागीश थे, तो कुछ लोग मानते हैं कि श्रीभवानंद सीधे श्रीरघुनाथ शिरोमणि के छात्र थे। लेकिन यह प्रमाणित नहीं है। वास्तव में कृष्णदास सार्वभौम ही श्रीभवानंद के गुरु थे।उन्होंने रघुनाथ शिरोमणि और जगदीश तर्कालंकार की महान ज्ञान-परंपरा में विद्याभ्यास किया था। उनकी शिक्षा में नव्य-न्याय के सूक्ष्म तर्क, वैयाकरणों के शब्दार्थ-विचार और मीमांसकों के विधि-निषेध विवेक का अद्भुत समन्वय था।

काल-निर्धारण की समस्या

इस न्याय-विशारद मनीषी के जीवन वृत्त और काल के विषय में पुख्ता ऐतिहासिक साक्ष्यों का अभाव है। इतिहासविदों के लिए उनका जीवनचरित आज भी अज्ञातप्राय है, तथापि यह निश्चित है कि १६वीं शताब्दी में नवद्वीप धाम और समग्र पश्चिम बंग में उनकी प्रज्ञा का आलोक सर्वत्र व्याप्त था।

काल-निर्धारण एवं ऐतिहासिक विमर्श

- आचार्य दिनेशचंद्र भट्टाचार्य ने अपने ग्रन्थ 'बङ्गे नव्यन्यायचर्चा' में निर्देशित किया है कि भवानन्द का काल सामान्यतः १६वीं शताब्दी के पूर्वार्ध के प्रथम भाग से लेकर उसके अंतिम भाग तक विस्तृत था। श्री कालीपद तर्काचार्य ने भी इस मत का समर्थन करते हुए 'तत्त्वचिन्तामणिदीधितिप्रकाश' के संदर्भ में उनके जीवनवृत्त को रेखांकित किया है।
- दिनेशचंद्र भट्टाचार्य ने ग्रन्थों के अंतःसाक्ष्य और बहिःसाक्ष्य का सम्यक विश्लेषण कर भवानन्द का आविर्भाव काल १५२०-१५९५ ईस्वी के मध्य स्वीकार किया है। इसके विपरीत, श्री सतीशचंद्र विद्याभूषण द्वारा प्रतिपादित काल (लगभग १६२५ ईस्वी) युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होता।
- चूँकि जगदीश तर्कालंकार का ग्रन्थ-रचना काल १६०० ईस्वी से पूर्व का है और भवानन्द सिद्धान्तवागीश उनके पूर्ववर्ती थे, अतः भवानन्द का आविर्भाव १६२५ ईस्वी में होना सर्वथा असंभव है। प्रो. इंगल्स के अनुसार

भवानन्द की 'तत्त्वचिन्तामणिदीधितिटिप्पणी' की प्राचीनतम पांडुलिपि १५९३ ईस्वी की उपलब्ध है, जो १६२५ ईस्वी के मत को पूरी तरह निराधार सिद्ध करती है।[1]

ऐतिहासिक साक्ष्य

- दिनेशचंद्र भट्टाचार्य ने गुप्तिपाडा ग्राम में भवानन्द कृत 'कारकचक्र' की एक शुद्ध प्रतिलिपि का परीक्षण किया था, जो १५६४ ईस्वी में लिपिबद्ध की गई थी। इससे न्यायसंगत रूप से सिद्ध होता है कि भवानन्द का आविर्भाव निश्चित रूप से १६वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हुआ था।
- इसके अतिरिक्त, बंगाल की 'राढीयकुलपंजिका' के विश्लेषण से भवानन्द की वंश-परंपरा के दो विवरण मिलते हैं, जिसके आधार पर भट्टाचार्य महोदय उनका आविर्भाव काल लगभग १५२५ ईस्वी अनुमानित करते हैं।

वैसे, विभिन्न साक्ष्यों के आधार पर श्रीभवानंद सिद्धांतवागीश का समयकाल १५१५ ईस्वी से १६०० ईस्वी के मध्य माना जाता है।

श्री भवानन्द की कीर्ति

बंगाल में शिक्षा और ज्ञान के प्रमुख केंद्र नवद्वीप में जिन असाधारण नव्य-नैयायिकों और संस्कृत पंडितों का प्रादुर्भाव हुआ था, उनमें भवानंद सिद्धांतवागीश एक प्रमुख नाम हैं। यद्यपि एक बंगाली नैयायिक के रूप में उन्हें बंगाल में उतनी सराहना नहीं मिली, लेकिन दक्षिण भारत में श्री भवानंद सिद्धांतवागीश को पर्याप्त रूप से सम्मानित और समादृत किया गया था। उन्होंने नव्य-न्याय के जटिल ग्रंथों की व्याख्या और व्याकरण के सैद्धांतिक पक्षों को अत्यंत कुशलता के साथ प्रस्तुत किया है। यही कारण है कि बंगाल के चार सुप्रसिद्ध नैयायिकों में श्री भवानंद को भी स्थान दिया जाता है—

"गुणोपरि गुणानन्दी भावानन्दी च दीधितौ।
सर्वत्र मथुरानाथी जागदीशी क्वचित् क्वचित्।।"[2]

श्री भवानंद द्वारा रचित ग्रंथों में 'मणिदीधितिप्रकाश' ग्रंथ ही सर्वश्रेष्ठ है। उस समय के विद्वानों के बीच भवानंद द्वारा रचित टीकाएँ अत्यंत प्रसिद्ध थीं। भवानन्द की कृतियों में 'मणिदीधितिप्रकाश' को सर्वोत्कृष्ट और सर्वविश्रुत माना गया है। दीधिति के व्याख्याकारों में भवानन्द का स्थान सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया गया है। तत्कालीन विद्वत्सभाओं में भवानन्द की टीकाओं का अत्यधिक आदर था।

पुणे के भंडारकर प्राच्यविद्या संस्थान में सुरक्षित 'गीर्वाणवाङ्ञ्जरी' की पांडुलिपि (रचनाकाल लगभग १७०८-१७२० ईस्वी) के एक संवाद से स्पष्ट होता है कि काशी में जगदीश और गदाधर जैसी प्रतिभाओं के वर्चस्व के समय भी, बंगाल के विद्वान भवानन्द के सिद्धांतों को अकादमिक रूप से अत्यंत सुदृढ़ मानते थे।

श्री भवानन्द सिद्धान्त वागीश द्वारा रचित ग्रन्थ

श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीश महोदय ने रघुनाथ शिरोमणि के असंख्य ग्रन्थों पर टिप्पणी की रचना की। श्री भवानन्दसिद्धान्तवागीश द्वारा बयालीस ग्रन्थ रचे गए—ऐसा मुद्रित सूचीपत्र से ज्ञात होता है। उन ग्रन्थों में से विभिन्न संस्थानों में उपलब्ध होने वाले ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

प्रमुख कृतियों का विवरणात्मक विवरण

प्रत्यक्षदीधिति-टीका

यह ग्रन्थ आज भी मुद्रित नहीं है। वर्तमान में कोलकाता संस्कृत विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सुरक्षित अमुद्रित पुस्तकों के संग्रह में खोज करके दिनेशचंद्र भट्टाचार्य द्वारा इस टीका की एक खंडित प्रतिलिपि (पांडुलिपि) खोजी गई है। उसके अनुसार, इस टीका में संप्रति चौरानवे पत्र उपलब्ध होते हैं। एक पत्र पर एक सौ पाँच पृष्ठ संख्या दिखाई देती है। अतः इस ग्रन्थ का संपूर्ण भाग आज भी उपलब्ध नहीं है।

---

[1] Ingalls, D.H.H., 1951, *Material for the Study of Navya Nyaya Logic*, Cumbridge, Massachusetts, Harvard University Press, p. 17, fr.72.

[2] तत्त्वचिन्तामणि दीधितिप्रकाशः, पृष्ठ-४

नञ्वादटीका

रघुनाथ शिरोमणि द्वारा रचित 'नञ्वाद' के ऊपर नैयायिक श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा टीका का निर्माण किया गया। वह टीका "नञ्वादप्रदीपटीका" इस नाम से प्रसिद्ध है। माथुरी-शब्दखण्ड के साथ शिरोमणि की नञ्वादटीका मुद्रित हुई थी, वहाँ इस ग्रन्थ के रचयिता का नाम निर्दिष्ट नहीं था। फिर भी, उस टीका की एक प्रतिलिपि के अंत में स्पष्ट रूप से लिखा है—

"श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन विनिर्मितः।
नञ्वादार्थप्रदीपोऽयं निहन्तु सुधियां तमः॥"[3]

अर्थात: श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा निर्मित यह 'नञ्वादार्थप्रदीप' विद्वानों के अंधकार को नष्ट करे।

इसके अतिरिक्त, इसी ग्रन्थ के मध्य में एक स्थान पर उन्होंने अपने द्वारा रचित अन्य ग्रन्थ का निर्देश किया है।अतः उपर्युक्त प्रमाणों से यह निश्चित रूप से ज्ञात होता है कि 'नञ्वादटीका' श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा ही रचित है।

अनुमानदीधितिटीका

यह भवानन्द का सर्वोत्कृष्ट प्रकरण ग्रन्थ और उनकी संपूर्ण भारत में फैली कीर्ति का मूल कारण माना जाता है। यह अत्यंत दुःखद और आश्चर्यजनक बात है कि इस ग्रन्थ की प्रतिलिपियाँ पश्चिम बंगाल को छोड़कर भारत में सर्वत्र— कश्मीर, पुण्यनगर, मद्रास आदि के पुस्तकालयों में प्राप्त होती हैं। अंततः, अनंत सौभाग्यवश स्वर्गीय महामहोपाध्याय गुरुचरण-तर्कदर्शन-तीर्थ के संपादन के साथ एशियाटिक सोसाइटी संस्था द्वारा इसका प्रथम भाग मुद्रित किया गया।

बंगाल प्रांत से बाहर, नव्य-न्याय के अध्ययन का प्रमुख केंद्र काशी धाम था। जब पश्चिम बंगाल में जगदीश और गदाधर की टीकाओं की प्रधानता के कारण भवानन्द का पठन-पाठन लगभग समाप्त हो चुका था, तब भी काशी धाम में भवानन्द के ग्रन्थों का अत्यंत आदर के साथ अध्ययन किया जाता था। अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध से ही भवानन्द के इस श्रेष्ठ ग्रन्थ का पठन-पाठन नवद्वीप से लुप्तप्राय हो गया था; फिर भी यह विस्मयकारी और हर्ष का विषय है कि नवद्वीप में पढ़ाई रुक जाने पर भी काशी धाम में उनकी यह परंपरा पहले की तरह ही अटूट बनी रही। इस ग्रन्थ के ऊपर महाराष्ट्रीय महानैयायिक द्वारा "भवानन्दीप्रकाश" नाम की विस्तृत टीका तथा "सर्वोपकारिणी" नाम की लघुटीका रची गई है।

आख्यातवादटीका

वर्तमान में यह ग्रन्थ अत्यंत दुर्लभ है। इतिहासविद् श्री दिनेशचंद्र भट्टाचार्य महोदय द्वारा इस दुर्लभ ग्रन्थ की एक संपूर्ण प्रतिलिपि (पत्र संख्या छब्बीस; लिपिकाल: १६५८ शक संवत) संस्कृत साहित्य परिषद में देखी गई थी। प्रसिद्ध नैयायिक भवानन्द सिद्धान्तवागीश के पौत्र रुद्रतर्कवागीश द्वारा लिखी गई खंडित प्रतिलिपि की पुष्पिका में दिखाई देता है—**"इति महामहोपाध्याय श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशभट्टाचार्यविरचिता शिरोमणिकृताख्यातवाद - सारमञ्जरी समाप्ता।"**अतः रुद्रतर्कवागीश द्वारा लिखी गई इस शुद्ध प्रतिलिपि से यह ज्ञात होता है कि 'आख्यातवादटीका' ग्रन्थ भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा ही रचित है।

गुणदीधितिटीका

यह ग्रन्थ भी अत्यंत दुर्लभ ग्रन्थों में गिने जाने योग्य है। श्री दिनेशचंद्र भट्टाचार्य ने नवद्वीप में इस ग्रन्थ की एक संपूर्ण प्रतिलिपि देखी थी, जिसमें एक सौ पाँच पत्र थे। वर्तमान में इस ग्रन्थ का संपूर्ण पाठ कलकत्ता नगर में स्थित 'एशियाटिक सोसाइटी' नामक पुस्तकालय में उपलब्ध है।

लीलावतीशिरोमणिटीका

नैयायिकों में श्रेष्ठ श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित ग्रन्थों में 'लीलावतीशिरोमणि' नामक ग्रन्थ अत्यंत दुर्लभ होने के साथ-साथ उनके सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थों में से एक गिना जाता है। इस ग्रन्थ की एक प्रतिलिपि इस समय लंदन नगर में स्थित

---

[3] . Dinesh Chandra Bhattacharya, *Bange Nabyanaya Charchā* (Bengali), Bangiya Sahitya Parisat, 243/1, Apar Carcular Road,Calcutta,1941.p-161

'इण्डिया-हाउस' नामक विख्यात पुस्तकालय में भली-भांति सुरक्षित है। वह प्रतिलिपि खंडित रूप में ही उपलब्ध है, जिसमें अट्ठावन पत्र हैं। इस ग्रन्थ का मंगलाचरण रूप श्लोक इस प्रकार है—

"नवनीलाम्बुदरुचिरं चरणरणत्किङ्किणीजालम्।
हैयङ्गवीनचोरं नन्दकिशोरं नमस्यामः॥"[4]

अर्थात: नवीन नील बादलों के समान सुंदर आभा वाले, जिनके चरणों में घुँघरुओं का समूह झंकार कर रहा है, तथा जो ताजे मक्खन के चोर हैं, उन नन्दकिशोर [श्रीकृष्ण] को हम नमस्कार करते हैं।

इस प्रकार श्रीकृष्ण परमात्मा के सगुण सौंदर्य का भक्तिभाव से वर्णन किया गया है। इस 'लीलावतीशिरोमणि' ग्रन्थ के प्रथम भाग में 'एकवारवाद' समर्थित और पोषित दिखाई देता है। परंतु इसके बाद के अंशों में मात्रापदों में शक्ति-विचार और उसके निर्धारण के तत्व का विस्तार से विवेचन किया गया है, जहाँ नव्य-न्याय परंपरा के अनुसार सूक्ष्मता से शक्ति का निर्णय किया गया है। ग्रन्थ की समाप्ति पर श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश ने अपना नाम स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट करके ग्रन्थ के रचयिता होने के विषय में संभावित सभी संदेहों का निवारण किया है। वहाँ स्पष्ट रूप से लिखा है-**"इति श्रीभवानन्दसार्वभौमविरचितमेवाकारटिप्पणम्"**। इस वाक्य से इस ग्रन्थ का रचयिता होना निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है।

प्रत्यक्षालोकसारमञ्जरी

यह ग्रन्थ नैयायिकों के मुकुटमणि श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित ग्रन्थों में विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस ग्रन्थ की प्रतिलिपियाँ इस समय कलकत्ता नगर में स्थित विख्यात 'एशियाटिक सोसाइटी' पुस्तकालय में, और जम्मू-प्रदेश में स्थित 'रघुनाथ मन्दिर' में दिखाई देती हैं। इस ग्रन्थ के प्रारंभ में कोई भी मंगलाचरण प्राप्त नहीं होता है, जो कि नव्य-न्याय के ग्रन्थों में एक विरल उदाहरण है। परंतु ग्रन्थ की समाप्ति पर मंगलाचरण के रूप में एक काव्यमयी रचना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, जो इस प्रकार है—

"श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन विनिर्मित।
अलङ्करोतु कंसारेश्चरणौ सारमञ्जरी॥
मयि नव्यधियाकृतं मदीयां विबुधा नैवमुधामानयन्तु।
नहि जातं विहातुमुत्सहन्ते प्रतिपच्चन्द्रमसो रुचिं चकोरा॥"-

इति श्रीमहामहोपाध्यायश्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशभट्टाचार्यविरचिता प्रत्यक्षालोकसारमञ्जरी समाप्ता।"[5]

इस समाप्ति-वाक्य से न केवल ग्रन्थकार का स्वामित्व स्पष्ट होता है, बल्कि नव्य-न्याय परंपरा में ग्रन्थकार के अपने प्रवेशकालीन आत्मविश्वास को भी प्रकट करता है। अतः ग्रन्थ के अंत में स्थित इस भाग के सूक्ष्म अनुशीलन से कुछ विद्वान और पंडित इस 'प्रत्यक्षालोकसारमंजरी' ग्रन्थ को श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश की प्रारंभिक रचना के रूप में स्वीकार करते हैं। इस प्रकार का मत ग्रन्थ की शैली, मंगलाचरण के विन्यास और आत्मपरिचय सूचक वाक्यों के प्रयोग पर विचार करने के बाद समर्थित होता है।

शब्दालोकसारमञ्जरी

यह ग्रन्थ नैयायिकों में श्रेष्ठ श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित ग्रन्थों में विशेष गौरव के साथ गिना जाता है। इस ग्रन्थ का उल्लेख उन्हीं के द्वारा रचित 'अनुमानदीधितिटीका' में बहुशः दिखाई देता है, जिससे इस ग्रन्थ की प्रामाणिकता, व्यापक प्रयोग और तात्त्विक महत्त्व स्पष्ट रूप से सिद्ध होता है। इस 'शब्दालोकसारमंजरी' ग्रन्थ का एक खंडित पाठ इस समय इण्डिया ऑफिस पुस्तकालय(लंदन) नामक प्रसिद्ध संग्रहालय में उपलब्ध है, जो पाठ-अनुसंधान की दृष्टि से अत्यंत मूल्यवान अंश है। इस ग्रन्थ का प्रथम श्लोक ही इसके मूल तत्त्वों के प्रति झुकाव तथा गुरु-परंपरा के प्रति बद्धता को सूचित करता है—

[4] Dinesh Chandra Bhattacharya, *Bange Nabyanaya Charchā* (Bengali), Bangiya Sahitya Parisat, 243/1, Apar Carcular Road, Calcutta,1941.p-162
[5] Dinesh Chandra Bhattacharya, *Bange Nabyanaya Charchā* (Bengali), Bangiya Sahitya Parisat, 243/1, Apar Carcular Road, Calcutta,1941.p-163

"नमस्कृत्य गुरून् मूर्ध्ना शब्दालोकस्य फक्किका।
श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन प्रकाश्यते॥"

अर्थात: गुरुओं को सिर झुकाकर आदरपूर्वक नमस्कार करके, शब्दालोक की फक्किकाओं को श्रीभवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है।

यहाँ "नमस्कृत्य गुरून् मूर्ध्ना" इस पद से ग्रन्थकार की विनयशीलता तथा परंपरा के प्रति निष्ठा प्रकट होती है, जबकि "शब्दालोकस्य फक्किका" इससे शब्द-तत्त्व के सूक्ष्म विवेचन की तत्परता निर्देशित होती है। अंत में "श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन प्रकाश्यते" इस स्पष्ट कर्ता-निर्देश से ग्रन्थ का रचयिता होना निर्विवाद रूप से स्थापित होता है।अतः उल्लेख-परंपरा,उपलब्ध खंडित पाठ, तथा प्रथम श्लोक में प्रत्यक्ष कर्ता-निर्देश-इन सभी प्रमाणों के समन्वय से निःसंदेह ज्ञात होता है कि 'शब्दालोकसारमञ्जरी' नामक ग्रन्थ श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा ही रचित है।

अनुमानालोकसारमञ्जरी

यह ग्रन्थ नव्यन्याय परंपरा के अत्यंत दुर्लभ ग्रन्थों में गिना जाता है। इस ग्रन्थ का एकमात्र ज्ञात प्रतिलिपि-मूलक पाठान्तर काशी में स्थित विख्यात 'सरस्वतीभवन' पुस्तकालय में सुरक्षित दिखाई देता है, जिसका पाठ-आलोचना की दृष्टि से बहुत बड़ा महत्त्व है। इस ग्रन्थ के प्रथम श्लोक की बनावट में 'लीलावतीशिरोमणि' ग्रन्थ के मंगलाचरण श्लोक के साथ स्पष्ट रूप से समानता दिखाई देती है— जो ग्रन्थकार की शैलीगत एकता और वैचारिक परंपरा के अनुसरण को प्रकट करती है। इसके पश्चात, ग्रन्थ के प्रयोजन को सूचित करने वाला दूसरा श्लोक दिखाई देता है—

"अनुमानमणी सारमालोकीयं प्रयत्नतः।
श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन प्रकाश्यते॥"

अर्थात: अनुमानमणि के इस आलोक-सार को श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा प्रयत्नपूर्वक प्रकाशित किया जा रहा है।यहाँ विशेष रूप से विचार करने योग्य बात यह है कि **"श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन प्रकाश्यते"** यह पदावली केवल एक काव्यालंकार नहीं है, बल्कि स्पष्ट रूप से कर्ता का निर्देश करने वाला एक प्रमाण-वाक्य है। इस पद्य के उत्तरार्ध में स्थित यह निर्देश ग्रन्थ के रचयिता होने की बात को निर्विवाद रूप से स्थापित करता है।अतः पाठ-आलोचना की दृष्टि से, शैलीगत समानता की दृष्टि से, तथा प्रत्यक्ष ग्रन्थकार-निर्देश के आधार पर यह निःसंदेह सिद्ध होता है कि 'अनुमानालोकसारमञ्जरी' नामक ग्रन्थ श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा ही रचित है।

शब्दमणिसारमञ्जरी

यह ग्रन्थ नव्य-न्याय परंपरा के अत्यंत दुर्लभ ग्रन्थों में से एक है। इसका नामोल्लेख स्वयं श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित 'अनुमानदीधितिटीका' में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है—

"एतेन शाब्दबोधादिकमपि व्याख्यातम्। अधिकं च शब्दमणिसार(म)ञ्जर्यां विरचितमस्माभिः॥"

अर्थात: इसके द्वारा शाब्दबोध आदि की भी व्याख्या हो गई है। और इस विषय में अधिकहमारे द्वारा 'शब्दमणिसारमंजरी' में रचा गया है।

इस वचन से न केवल ग्रन्थ के अस्तित्व की सिद्धि होती है, बल्कि इसके तात्त्विक परिपूरक होने का भी संकेत मिलता है; क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि शाब्दबोध के विषय में 'अनुमानदीधिति' की अपूर्णता को पूरा करने के लिए ही इस ग्रन्थ की रचना की गई थी।वर्तमान में इस ग्रन्थ का केवल एक ही खंडित पाठ-अंश उपलब्ध है, जो पाठ-आलोचना की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि संपूर्ण ग्रन्थ लुप्तप्राय है, फिर भी उपलब्ध अंश नव्य-न्याय के शब्द-तत्त्व विचार के ऐतिहासिक विकास का बोध कराता है।

ग्रन्थ के मंगलाचरण में ही ग्रन्थकार अपने नाम का प्रत्यक्ष रूप से निर्देश करते हैं— जिससे कर्तृत्व के विषय में सभी संभावित संदेहों का निवारण हो जाता है। वह मंगलाचरण इस प्रकार है—

"श्रीगोविन्दपदाम्भोजनखचन्द्रमरीचयः।
निगूढं गाहमानस्य मम सन्त्ववलम्बनम्॥
नमस्कृत्य गुरून् शब्दमणौ सारं प्रयत्नतः।

श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन प्रकाश्यते॥"[6]

अर्थात: श्री गोविंद के चरण-कमलों के नख-रूपी चंद्रमा की किरणें, गूढ़ विषयों में प्रवेश करने वाले मेरे लिए अवलंबन बनें। गुरुओं को नमस्कार करके, शब्दमणि के सार को श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा प्रयत्नपूर्वक स्पष्ट किया जा रहा है।यहाँ प्रथम श्लोक में श्री गोविंद के चरणों का आश्रय माँगा गया है— जिससे ग्रन्थ की वैष्णवाभिमुखी दार्शनिक पृष्ठभूमि सूचित होती है। द्वितीय श्लोक में "नमस्कृत्य गुरून्" इस पद से परंपरा के प्रति निष्ठा दिखाई गई है, जबकि "शब्दमणौ सारं प्रयत्नतः" इस पदावली से शब्द-तत्त्व के सारग्राही विवेचन का प्रयत्न सूचित होता है। अंत में "श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशेन प्रकाश्यते" इस प्रत्यक्ष निर्देश से ग्रन्थकार का स्वामित्व निर्विवाद रूप से स्थापित होता है।

शब्दार्थसारमंजरी

भवानंद सिद्धांतवागीश द्वारा रचित 'शब्दार्थसारमंजरी' सोलहवीं शताब्दी के बंगाल के नव्य-न्याय और संस्कृत शब्दार्थशास्त्र का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रामाणिक ग्रंथ है। भवानंद ने अपने अकाट्य तार्किक विश्लेषण के माध्यम से इस ग्रंथ में शब्द के अर्थ, उसकी शक्ति, कारक-विभक्ति और समास के जटिल नियमों की नव्य-न्याय के दृष्टिकोण से बहुत सुंदर व्याख्या की है। यह ग्रंथ भवानंद सिद्धांतवागीश द्वारा रचित एक मौलिक कृति है। वर्तमान में इस ग्रंथ के चार प्रकरण उपलब्ध हैं। नीचे संक्षेप में इन प्रकरणों की चर्चा की गई है—

आख्यातविचार

नैयायिक भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित 'शब्दार्थसारमञ्जरी' का एक प्रमुख प्रकरण 'आख्यातविचार' है। यह न्याय और व्याकरण से संबंधित एक संस्कृत ग्रन्थ है, जिसमें नव्य-न्याय दर्शन के दृष्टिकोण से क्रियापद की विभक्ति या प्रत्यय के अंतर्निहित अर्थ और वाक्य के 'शाब्दबोध' का विस्तृत दार्शनिक विश्लेषण किया गया है।इसमें रघुनाथ शिरोमणि ग्रन्थ के अनुसार आख्यात के अर्थ की गंभीर मीमांसा की गई है।

षट्समासविवेचन

'षट्समासविवेचन' श्री भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित एक दुर्लभ प्रकरण ग्रन्थ है। संस्कृत व्याकरण का एक मुख्य अंग 'समास' है। व्याकरण के इस समासतत्व का भवानन्द ने नव्य-न्याय दर्शन के सूक्ष्म तार्किक दृष्टिकोण से विश्लेषण किया है। श्री भवानन्द ने सामासिक शब्दों के पूर्वपद, उत्तरपद या अन्य पद की अर्थ-प्रधानता का तर्कसंगत दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है। इसके अतिरिक्त, समास के अर्थ को प्रकट करने में 'शक्ति' और 'लक्षणा' के महत्व को रेखांकित करते हुए उन्होंने व्याकरण के समासतत्व के साथ नव्य-न्याय दर्शन का एक अपूर्व समन्वय स्थापित किया है।

कारकचक्र

महामहोपाध्याय श्रीभवानंद सिद्धांतवागीश द्वारा रचित 'शब्दार्थसारमंजरी' ग्रंथ का एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रकरण 'कारकचक्रम्' है। इस प्रकरण में पंडित भवानंद ने प्रचलित पाणिनीय व्याकरण की परंपरा से थोड़ा हटकर, पूरी तरह से नव्य-न्याय की अकाट्य तार्किक शब्दावली का उपयोग करके संस्कृत कारक और विभक्ति के अर्थ को निर्धारित किया है। यहाँ केवल क्रिया के साथ पदों के सीधे संबंध पर ही विचार नहीं किया गया है, बल्कि वाक्य सुनने के बाद मनुष्य के मन में 'शाब्दबोध' कैसे उत्पन्न होता है, इसका अत्यंत सूक्ष्मता से विश्लेषण किया गया है। कर्ता, कर्म, करण आदि छह कारकों की प्रचलित परिभाषाओं का नव्य-न्याय के दृष्टिकोण से विश्लेषण करके तथा पूर्ववर्ती वैयाकरणों के मतों का खंडन करते हुए श्रीभवानंद ने इस अध्याय में शब्दार्थ-शास्त्र मौलिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है।

दशलकारविवेचनम्

यह 'शब्दार्थसारमञ्जरी' का एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रकरण है। इस प्रकरण-ग्रन्थ में दसों लकारों के शाब्दबोध और वाच्यार्थ के निर्धारण को नव्य-न्याय के दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया गया है। व्याकरण के नियमों के साथ नव्य-न्याय दर्शन

---

[6] Dinesh Chandra Bhattacharya, *Bange Nabyanaya Charchā* (Bengali), Bangiya Sahitya Parisat, 243/1, Apar Carcular Road, Calcutta,1941.p-163

का समन्वय करके, क्रियापद का काल और भाव किस प्रकार एक वाक्य का पूर्ण अर्थ निर्मित करते हैं, इसे इस प्रकरण में बहुत ही सुंदर ढंग से प्रतिपादित किया गया है।

कारणताविचार

महामहोपाध्याय भवानन्द सिद्धान्तवागीश द्वारा रचित 'कारणताविचार' (या कारणतावाद) ग्रन्थ का मूल प्रतिपाद्य विषय नव्य-न्याय दर्शन की पारिभाषिक शब्दावली में कार्य-कारण सिद्धान्त का सटीक और तार्किक विश्लेषण करना है। इस ग्रन्थ में भवानन्द ने अत्यंत सूक्ष्म विचार-पद्धति के माध्यम से कारण के लक्षण या परिभाषा को निर्धारित किया है और किसी कार्य की उत्पत्ति में कारण का 'नियतपूर्ववृत्तित्व' तथा 'अनन्याथासिद्धत्व' किस प्रकार कार्य करता है, इसकी व्याख्या की है। यह एक लघु वाद-ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि पुणे में संरक्षित है। इस ग्रन्थ के अंत में 'निमित्तकारणतेति संक्षेपः। इति भवानन्द भट्टाचार्य्य-विरचिते का(रण)ताविचारः समाप्तः।' लिखा हुआ है, जिससे यह सिद्ध होता है कि यह वाद-ग्रन्थ श्रीभवानन्द की ही रचना है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध के विस्तृत अध्ययन के उपरांत निम्नलिखित महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्राप्त होते हैं:

विभिन्न तथ्यों और ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर श्रीभवानंद सिद्धांतवागीश के अनुमानित अभ्युदयकाल के संबंध में एक स्पष्ट और तर्कसंगत समझ प्राप्त की जा सकती है।

मुद्रित सूचीपत्रों के अनुसार भवानन्द जी ने कुल ४२ ग्रंथों की रचना की। यद्यपि बंगाल के विद्वानों की कतिपय उपेक्षा या असूया के कारण उनकी सर्वोत्कृष्ट कृति 'मणीदीधितिप्रकाश' (भवानन्दी) को वहाँ वह स्थान नहीं मिला, तथापि दक्षिण भारत और काशी जैसे प्रमुख सांस्कृतिक केंद्रों में इसका पठन-पाठन अत्यंत आदर के साथ निरंतर चलता रहा।

भवानन्द जी के ग्रंथों के अंत में मिलने वाले श्लोक और पुष्पिकाएं (जैसे "इति महामहोपाध्याय... श्रीभवानन्दसिद्धान्तवागीशभट्टाचार्यविरचिता...") तथा विभिन्न ग्रंथों के मंगलाचरणों में पाई जाने वाली अद्भुत साहित्यिक समानताएं (जैसे लीलावतीशिरोमणिटीका और अनुमानालोकसारमञ्जरी में एक समान मंगलाचरण श्लोक) यह निर्विवाद रूप से प्रमाणित करती हैं कि ये अत्यंत क्लिष्ट और गूढ़ दार्शनिक रचनाएं उन्हीं की प्रज्ञा की उपज हैं।

संक्षेप में कहें तो, भवानन्द सिद्धान्तवागीश केवल एक टीकाकार नहीं थे, अपितु नव्य-न्याय पद्धति के नव-प्रवर्तक थे। भले ही उनकी कई कृतियाँ आज भी हस्तलिखित या खंडित अवस्था में विभिन्न पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं, लेकिन न्यायशास्त्र के इतिहास में उनका स्थान सदैव अक्षुण्ण रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थसूची

भट्टाचार्य्य, श्रीदीनेशचन्द्र। *वङ्गे नव्यन्यायचर्चा*। अभय वर्मन, संस्कृत वुक डिपो

मुखोपाध्याय, सत्यनारायण। *नवद्वीपेर व्याकरण दर्शनेर इतिहास*। नवद्वीप पुरातत्त्व परिषद, मार्च,२०२१।

राढी, कान्तिचन्द्र। *नवद्वीप-महिमा*। दत्त, श्रीजितेन्दीय, दत्त, श्रीफणिभूषण। नवद्वीप पुरातत्त्व परिषद, नवद्वीप। १३४४ वङ्गाब्द।

वन्दोपाध्याय, श्री अशोक कुमार, सम्पादक। *कारकाद्यर्थनिर्णय*। सदेश, १४१४ वङ्गाब्द।

सिद्धान्तवागीश, भवानन्द। *कारकचक्रम्*। शास्त्री, श्रीब्रह्मशङ्कर, सम्पादक। गुप्त, जयकृष्णदास-हरिदास, चौखम्बा संस्कृत सीरिज आफिस, विद्याविलास प्रेस, वनारस-१।

सिद्धान्तवागीश, भवानन्द। *तत्त्वचिन्तामणि दीधितिप्रकाश*। तर्काचार्य्य, कालिपद, सम्पादक। द्या एशियाटिक सोसाइटी।

हालदार, श्रीगुरुपद। *व्याकरण दर्शनेर इतिहास*। श्री अभय वर्मन, संस्कृत वुक डिपो, २०१७।